रोज़े की हिक्मत

अल्लामा सै० मुज्तबा हसन कामूनपूरी साहब क़िबला

क़ुरआन मजीद में है—"ईमान वालों ! पिछली उम्मतों की तरह तुम पर भी रोज़ा वाजिब किया गया है ताकि तुम पहेज़गार बनो, यह रोज़े चन्द दिन के हैं। (सूरा 2 आयत 123)

इस आयत में रोज़े का मक्सद प्रहेज़गारी बताया गया है, प्रहेज़गारी इन्फ़िरादी ज़िन्दगी में, प्रहेज़गारी सियासी और इज्तिमाई ज़िन्दगी में, प्रहेज़गारी तसव्वुरात में, कौल में, प्रहेज़गारी अमल में, प्रहेज़गारी अम्न और सुल्ह की ज़िन्दगी में, प्रहेज़गारी जंग व मोख़ालफ़त के मौकिअ् पर। माह—ए—रमज़ान में खुदावन्द—ए—करीम ने क़ुरआन नाज़िल फ़र्माया। इस किताब ने कुल इंसानों को एक आदिलाना आईन और इरतका पसन्द निज़ाम व दस्तूर दिया। यह आमाल की तराज़ू, हक़ का क़ानून रूह की ग़िज़ा, अक़्ल की लज़्ज़त और दिल की शिफ़ा है। इस में आलम के कुल इंसानों के मसायिल को एक नुक्तः—ए—नज़र से देख गया हैं हर साल रमज़ान आता है और इस्लाम की इब्तिदाई ज़िन्दगी की याद ताज़ा करता है जिस में यह किताब—ए—मोकद्दस अता हुवी।

इस्लाम ने इस्लाह—ए—नफ़्स व इस्लाह—ए—मोआश्रत के लिये हैं उन में रोज़े भी हैं। इस महीने में रोज़े भी हैं। इस महीने में हम दो निअ्मतों से सरफ़राज़ हुवे——क़ुरआन की निअ्मत से और रोज़े की नेमत से यानी अिल्म व फ़िक्र की निअ्मत से और रोज़े की नेमत से जो इस फ़ैज़ के कुबूल करने का ज़रीआ है यानी रोज़ा।

रोज़े से नफ़्स की हिदायत होती है, हक़ में उसे सुकून मिलमा है और कुबूल—ए—हक़ से फ़रहत होती है, जिस्म के रज़ायिल दूर होते हैं। बुग्ज़ कीना, इन्तिकाम, शहवत, खुर्दनोश और जिंसी तुग्यानी की इस्लाह हो जाती है। रोज़ा कूवत—ए—इरादी में इस्तिहकाम पयदा करता है, इस से अज़ीयत और शदीद तकालीफ़ को बरदाशत करने की आदत होती है। जंग के दिनों में ज़ब्त—ए—नफ़्स और किफ़ायत शिआ्री की आवाज़ें बहुत सुनने में आती हैं। सच्चा मुसलमान अपने नफ़्स को बातिल से हर वक़्त और हर आन बरसर—ए—पयकार रखता है उसे ज़ब्त—ए—नफ़्स और क़िफ़ायात शिआ्री की बहुत ज़रूरत है। रोज़े से हरसाल घर में कम से कम एक महीने यह तरबियत हासिल की जाती है। तमाम मरगूब चीज़े इन दिनों इख़्तियार और इरादे से छोड़ दी जाती हैं। न खाना न पानी न जिंसी तअल्लूक़। सब सुब्ह से शाम तक इम्कान के बावजूद हुक्म—ए—इलाही से, रिज़ा—ए—इलाही के लिये छोड़ दिये जाते हैं। इससे तसव्वुर—ए—इलाह के बेपनाह असर व जज़्बे का, इंसान की बन्दगी का बे मिसाल मुज़ाहरा होता है।

कुरआन मजीद में है कि "सब्र (रोज़े) और नमाज़ से मदद लो" (सूरा 2 आयत 45)। इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) से इस आयत में "सब्र" का मफ़्हूम पूछा गया तो हज़रत ने फ़र्माया कि रोज़े से सब्र व बरदाशत की बड़ी कूवत पयदा होती है बलकि सब्र अख्लाक़ी कूवत की जान है। ज़िन्दगी के अरसः—ए—कशमकश से सब्र भी फ़ातिहाना गुज़रता हैं साबिर ही बशाशत व खुश दिली से जान व माल का ईसार करता है इस लियं हदीस में है कि "सब्र ईमान का आधा हिस्सा है" और कुरआन में 70 बार से ज़ियादा सब्र व साबिरीन का ज़िक्र आया है।

रोज़े से जो कूवत—ए—बरदाशत पयदा होती है उस से ज़िन्दगी की हर राह में मदद मिलती है। रोज़े से फ़ुक़रा की हालत का अन्दाज़ा

होता है, भूखों व बेसहारा इंसानों की तक्लीफ़ों का एहसास होता है और दिल में हुस्न–ए–सुलूक़, ईसार व सख़ावत, सदक़ा ख़ैरात की उमंग पयदा होती हैं जनाब रसूल–ए–ख़ुदा (स0) हर मौकेअ् पर ईसार व सख़ावत का बादल बरसाते थे लेकिन माह–ए–रमज़ान में खुसूसीयत के साथ सख़ावत व ईसार के अब्र–ए–बारां रहते।

शिकमपुरी इस इहसास को मुर्दा कर देती है कि यह खुशहाली किसी का इनआम है। रोज़े की तक्लीफ़ से पूरे साल इन्आम–ए–इलाही से मुतमत्तिअ् होने की क़द्र व क़ीमत मालूम होती है और रूह शुक्रिये व सिपास के लिये झुकी है। ताअत का शौक़ बढ़ता है, मोहर्रमात से नफ़्रत हो जाती है। इस की इसी अहम्मीयत से इस्लाम ने फ़ुरूअ–ए–दीन में नुमायां तौर पर ज़िक्र किया है और खुदा ने इस अिबादत को अपनी तरफ़ निस्बत दी है। हदीस–ए–क़ुदसी में है ''रोज़े की अिबादत खास मेरे लिये है और मैं खुद उस की जज़ा दूंगा।''

सिर्फ़ फ़ाक़ा कशी से रोज़े का मक्सद पूरा नहीं हो जाता क्यों कि हक़ीक़त–ए–रोज़ सिर्फ़ आज़ा की गुरसनगी व तशनगी नहीं है बलबि इस्लामी रोज़ा शुअूर व इहसास व तसव्वुरात का दक़ीक़ा है। जनाब–ए–रसूल–ए–ख़ुदा (स0) का इरशाद–ए–गेरामी है कि ''जब रोज़ा रखो तो तुम्हारा रोज़े का दिन और बेरोज़े का दिन दोनों एक तरह के न हों''।

नमाज़ से ज़ाहिरी मसावात का अिल्म होता है और रोज़े से मसावात–ए–बातिनी की तालीम मिलती है। अमीर ग़रीब सब एक हाल में होते हैं। रोज़े से इज्तिमाअी तरक़्क़ी के बहुत से फ़ायिदे उठाये जा सकते हैं इतिहाद व यकरंगी का मंज़र अंदाज़ न होना चाहिए।

अीद के दिन मस्जिदों में एक आम चहलपहल, मुश्तरक मसर्रत बहुत दिलकश होती हैं रोज़े की नाकाबिल–ए–इंकार इफ़ादीयत ही की वज्ह से लगभग दुनिया की हर क़ौम ने (पारसीयों के अलावा) किसी न किसी शक्ल में रोज़े की अहम्मीयत का इअ्तिराफ़ किया है।

रोज़े के मुताअल्लिक कुछ मस्अलेः–रोज़े से मुराद–सुब्ह–ए–सादिक से शाम तक उन चीज़ों से बाज़ रहना है जिन को शरिअ्त ने मनअ किया है।

वाजिब रोज़े–रमज़ान या उस की कज़ा के रोज़े अह्द का रोज़, कसम, नज़्र, और क़फ्फारों के रोज़े बड़े बेटे पर, किसी मय्यत की तरफ़ से उज्रत लेके, इअ्तिकाफ़ के रोज़े।

सुन्नत रोज़े।

यह बहुत सारे हैं, रजब और शा़बान के महीनः भर के रोज़े हर चांद के महीने की 13 वीं, चौदहवीं और पन्दरहवीं के रोज़े वग़ैरः।



(पेज नं0 6 बक़िया)

10. इस्लामी भाई बहनों! हम भी क़ुर्आन से दूर पड़े क़ुरआन विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय योजना के मारे हुए थे। क़ुरआन की तरफ़ पलटने का आनन्द नहीं देखा था। ईरान की वैभवशाली इस्लामी क्रान्ति और इस्लामी गणतन्त्रीय व्यवस्था की स्थापना इस पलटने की एक बरकत का प्रभाव है। आज यह क़ौम ज़िन्दगी के वातावरण समाजी–सम्बन्ध, शासन के गठन और स्वरूप, अपने नेताओं के हाव–भाव, विदेश–नीति, शिक्षा–दीक्षा में क़ुरआनी शिक्षा की कुछ चिन्गारियां देख रही हैं। अब तक क़ुरआन के स्वर्ग की ठण्डी हवा का एक झोंका हम तक आया है लेकिन इस वास्तविक जन्नत के अन्दर जाने का रास्ता खुला है।

11. हमें गौरव है कि हमने चेतना के काम क़ुरआन की आवाज़ को सौंप दिए हैं। सभी क़ौमों की ज़िम्मेदारी भी यही है। विशेषकर धर्माचार्य बुद्धिजीवी, धर्मउपदेशकों, लेखक और शोधकर्ता सज्जनों का यह सबसे बड़ा कर्तव्य है।

